RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-01
January -2019
ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

बौद्ध धर्म में स्त्रियों की भूमिका

डॉ. रंजना रानी सिंघल

एसोसिएट प्रोफेसर, सत्यवती कॉलेज (सांध्य) दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली– 110052

विश्व का इतिहास पुरुषों का इतिहास रहा है क्योंकि इसे महिलाओं की कोई चर्चा किए बगैर लिखा गया था। समाज में महिलाओं की भूमिका काफी सीमित, घिसी–पिटी व निम्न स्तर की रही है। इस विश्व की रचना व प्रगति में महिलाओं को भागी मानने के बजाए पुरुषों ने उन्हें विभिन्न व बाधक वस्तु के रूप में देखा है। वे अपने जीवन में कुछ ज्यादा पा भी नहीं सकती थी। क्योंकि उनकी पहुंच नगण्य वस्तुओं तक ही सीमित थी। उनके जीवन की पुरुष प्रधान दुनिया में महिला पक्षीयरूख की बहुत ज्यादा आशा नहीं की जा सकती थी। पुरुषों को हमेशा यह स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव हुई है कि महिलाएं भी पुरुषों की तरह अनुराग व पीड़ा तथा विकास व क्षय का शिकार हो सकती है। इसलिए मानव जाति को ठीक से समझने के लिए एक ऐसे प्रतिमान की आवश्यकता है जिसमें किसी एक लिंग को केन्द्र में तथा दूसरे को किनारे पर रखने से सुनिश्चित तौर पर बचा जा सके।[1] इस तरह का प्रतिमान यह स्वीकारेगा कि मानव दो लिंगों के हैं और दोनों में समान रूप से मानवीयता है। यह प्रतिमान इस तथ्य की भी पहचान करेगा कि प्रत्येक समाज में लिंग आधारित भूमिकाओं व मान्यताओं ने पुरुषों व महिलाओं को जितना एक दूसरे से अलग व भिन्न दिखाया है उतने वे जैविक तौर पर नहीं है।[2] इस प्रकार ऐसा प्रतिमान उस मानवीय सृजनात्मकता की अभिव्यक्ति चाहे वह कलात्मक, सामाजिक या बौद्धिक हो, की पहचान करेगा, जो दोनों ही लिंगों द्वारा रची व अनुभव की गई हो।[3]

भगवान् बुद्ध का युग गंगा नगरीकरण के उद्‌भव व विकास के साथ–साथ व्यक्तिवाद के उदय और तत्कालीन ब्राह्मण संस्कृति के हाशिये का गवाह था। बुद्ध ने पुरुषों व महिलाओं को एक एकीकृत व्यक्तित्त्व के पूरक पहलुओं के तौर पर करूणा व बुद्धि के रूप में देखा। व्यक्तिगत् रूप में बुद्ध ने संघ के भीतर महिलाओं को पुरुषों के समान दर्जा प्रदान किया। बुद्ध तथा आनन्द जैसे उनके कुछ सहयोगियों का यह स्पष्ट मानना था कि जाति की तरह लिंग भी किसी व्यक्ति द्वारा दुःख से छुटकारा पाने के, बौद्ध लक्ष्य को प्राप्त करने में बाधा नहीं हो सकता था। पत्नी व पुत्र के परित्याग के कारण बुद्ध की आलोचना करना अनुचित है। क्योंकि उस समय आध्यात्मिक ज्ञान पाने की चेष्टा रखने वालों से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे मनुष्य की तीन सार्वभौम बेड़ियों– धन, स्त्री व प्रतिष्ठा को ठोकर मारे।[4] ज्ञान प्राप्ति के लिये सिद्धार्थ ने ब्राह्मणवाद की परम्पराओं का अनुसरण करते हुए दुनिया त्यागी थी और इस चरण की उनकी गतिविधियों को बोधि प्राप्ति के बाद के उनके विचारों व कार्यों के मूल्यांकन के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता।

बुद्ध महिलाओं को सैद्धान्तिक रूप से पुरुषों के समान समझते थे। बौद्ध धर्म में नारी समाज के प्रति परस्पर दो विरोधी रूप प्रदर्शित किए गए हैं। एक ओर उसे धार्मिक जीवन के लिये नितान्त बाधक माना गया है। क्योंकि बुद्ध गृहस्थ जीवन को निर्वाण प्राप्ति के मार्ग में बाधक समझते थे। इसलिए स्वयं बुद्ध ने गृहस्थ जीवन त्याग कर परिव्राजक जीवन का प्रतिपादन किया गया था। उदाहरण के लिए जब शाक्य और कोलिय वंश के झगड़े में शाक्य राजा शुद्धोधन (बुद्ध के पिता) व अन्य शाक्य कुमारों की मृत्यु के पश्चात् जब महाप्रजापति गौतमी अन्य शाक्य स्त्रियों को साथ लेकर सिर मुंडा कर, काषाय वस्त्र धारण करके बुद्ध के पास वैशाली पहुंची तो स्त्री को प्रवज्जा देने से बुद्ध ने इन्कार कर दिया। आनन्द के तर्क–वितर्क करने पर कि क्या भिक्षुणियाँ बनकर स्त्रियाँ अहत्–फल प्राप्त कर सकती है तो बुद्ध ने कहा ''हाँ यह सम्भव है'' व अनुनय–विनय पर प्रवज्जा की आज्ञा आठ शर्तों (अट्ठ गुरू धम्मा) पर दे दी। उस समय 500 उच्च शाक्य कुल की नारियां प्रव्रजित हुई थी। बौद्ध संघ की स्थापना के पांच वर्ष बाद बौद्ध भिक्षुणियों का एक पृथक संघ ही बन गया।[5] उन सब ने तथागत् के श्रीचरणों की छत्रछाया में बैठकर धर्म साधना का अभ्यास किया था। ये आठ शर्त अर्थात् अट्ठ गुरू धम्मा[6] इस प्रकार हैं–

- चाहे वे (स्त्री) शतायु ही क्यों न हों, उन्हें प्रत्येक भिक्षु का आदर करना व प्रणाम करना चाहिए। उनके आगमन पर खड़ें हो जाना चाहिए। भिक्षुणी संघ में चाहे कितने वर्षों तक रही हो, तो भी उसे चाहिए कि वह छोटे–बड़े सभी भिक्षुओं को प्रणाम करें। (भिक्षुणियाँ, भिक्षुओं का आदर करेगी)
- जिस गांव या विहार में भिक्षु न हो वहां भिक्षुणी न रहे। भिक्षुविहीन स्थान पर उन्हें वर्षा वास का काल व्यतीत नहीं करना चाहिए। (अभिक्षु कुल में भिक्षुणियों का वर्षावास नहीं होगा)
- हर पखवाड़े में उपोसथ किस दिन है, और धर्मोपदेश सुनने के लिए कब जाना है, ये दो बातें भिक्षुणी भिक्षु संघ के पूछ लें।
- वस्सावास तथा चातुर्मास्य के बाद भिक्षुणी को दोनों संघ की अर्थात् भिक्षु संघ की और भिक्षुणी संघ की प्रवारण करनी चाहिए अर्थात् स्वदोष बताने के लिए सबसे प्रार्थना करनी चाहिए।
- प्रति अर्द्ध मास वे किसी भिक्षु के समक्ष अपने पापों को स्वतः स्वीकार कर लें और जिस भिक्षुणी से संघादिशेष आपत्ति हुई हो उसे दोनों संघों में पन्द्रह दिनों का मानत्त (संघ के संतोष के लिए विहार से बाहर रातें

RRIJM 2015, All Rights Reserved

बिताना) लेना चाहिए। (दोनों संघों से क्षमायाचना करनी चाहिए)

- जिसने दो वर्ष तक अध्ययन किया हो ऐसी श्रामणेरी को दोनों संघ उपसम्पदा दे दें।
- किसी भी कारण से भिक्षुणी भिक्षु को गाली गलौच न दे। भिक्षु भिक्षुणी को उपदेश दे। (आक्रोश– परिभाषण नहीं)
- भिक्षुणी को अपने कर्त्तव्यों को भली–भांति समझना चाहिए।
  - ✓ प्रति अर्द्ध मास उन्हें एक भिक्षा लानी चाहिए।
  - ✓ उन्हें भिक्षुओं से पृथक रहना चाहिए। जिससे वे उन्हें न देख सके और न सुन सकें।
  - ✓ वे भिक्षुओं को विपथ न करें।
  - ✓ भिक्षुणी, क्रोध, अपशब्दता व पाप से मुक्त रहें। भिक्षुणियों के लिए भिक्षुओं से कुछ कहने का मार्ग निरूद्ध है भिक्षु के लिए निरूद्ध नहीं है।

इस प्रकार बौद्ध संघ में भिक्षुणी को आठ गुरू धर्मों 'अट्ठ गुरू धम्मा' का पालन स्वीकार करना पड़ता था। इन नियमों के पीछे भगवान् बुद्ध को शायद यही भय था कि भिक्षु व भिक्षुणी का सम्पर्क कहीं संघ में भ्रष्टाचार न उत्पन्न कर दे। इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि महात्मा बुद्ध मानवी चरित्र की दुर्बलताओं से भली–भांति परिचित थे। संघ में स्त्री प्रवेश निषेध के द्वारा उनके उद्दीपन की सम्भावना को निर्मल करना चाहते थे और सारी सत्ता भिक्षु संघ के हाथ में रहे, इसलिए यह नियम बनाये गये। इतने पर भी बुद्ध का अंतिम कथन यही था कि स्त्रियों के संघ में प्रवेश से संघ की आयु क्षीण हो गयी है। यदि स्त्री संघ में प्रवेश नहीं पाती तो यह धर्म एक हजार वर्ष तक कायम रहता, किन्तु अब सधर्म स्त्रियों के प्रवेश के कारण पांच सौ वर्ष तक ही कायम रहेगा।[7]

अस्सी वर्ष की आयु में बुद्ध का जब अंत समय आया उसी समय स्त्रियों के प्रति भिक्षुओं के बर्ताव सम्बन्धी प्रश्न को लेकर आनन्द ने प्रश्न पूछा कि हम स्त्रियों के साथ कैसा बर्ताव करे। तब भगवान् ने कहा– 'कथं मयं भन्ते मातुग्गामे पटिपज्जामाति' (अर्थात् किस प्रकार भन्ते। हम स्त्रियों के साथ बर्ताव करेंगे)। भगवान् ने कहा– अदसन्न आनन्दाति (न देखना आनन्द) 'सति दस्सने भन्ते कथं पटिपज्जितब्बति' (दर्शन होने पर भगवान् कैसे बर्ताव करेंगे) आनन्द के पूछने पर भगवान् बोले 'अनालापों आनन्दाति' (आलाप न करना आनन्द) 'आलपन्तेन भन्ते कथं पटिपज्जितब्बं' (आलाप भी करना पड़े तो भगवान् कैसे करना चाहिए) भगवान् ने उत्तर दिया 'सति आनन्द उपट्ठापतबबा' (स्मृति को आनन्द संभाले रखना)।[8]

अतः यह स्पष्ट है कि जहां कही भी नारी की कटु आलोचना की गई है कि वह कामिनी रूप में ही की गई है। बुद्ध ने इसी रूप में नारी के संघ में प्रवेश का विरोध किया था। बुद्ध के लिए यह कथन कहना असत्य है कि वे स्वभाव से स्त्री विरोधी थे और उसे नितान्त हेय समझते थे। स्त्री विरोधी उनके कथन स्त्री पर कामिनी के रूप में ही उपयुक्त होते हैं। उनका उद्देश्य समस्त स्त्री समाज की प्राकृतिक अयोग्यता का प्रतिपादन करना नहीं थां बौद्ध इतिहास की अमर नारियां– खेमा, गौतमी, किसा, धम्मदिन्ना, विसाखा आदि बुद्ध के इस विश्वास की सत्यता की साक्षी है।

दूसरी ओर महात्मा बुद्ध के अनुसार नारी में कोई भी क्षुदता नहीं है और उसे पुरुष की सम्पत्ति मात्र नहीं समझना चाहिए। नारी को नितान्त शुभ वर्णों से अंकित किया है। पवित्रता के रूप में वह पुरुष की परम् सखा है। स्त्री पुरुष की जननी है। अतः वह कभी भी घृणा की पात्री नहीं हो सकती। जातक कथाओं में सुजाता आदि अनेक पतिव्रता एवं सच्चरित्रा स्त्रियों के उदाहरण भरे पड़े हैं। बुद्ध ने नारी को नितान्त शुभ वर्णों से अंकित किया है। वह समाज की आधारशिला है। माता तथा भार्या के रूप में वह जिन कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का संवहन करती है, उन्हीं पर समाज का उत्कर्षापकर्ष अवलम्बित है। पुरुष के व्यक्तित्त्व का अंकुरण माता के अंक में ही होता है। यही उसका प्राथमिक एवं सर्वप्रधान शिक्षालय है। यदि माता पुरुष के चरित्र की संरोपण भूमि है तो पत्नी उसके विकास की हेतु प्रसर स्तम्भ।[9]

पत्नी के रूप में स्त्री पुरुष के सुख–दुख, आशा–निराशा, उत्थान–पतन आदि द्वन्दों में चिर साहचर्य देती हुई। जीवन के सम–विषम पथ पर उसके साथ निरन्तर गति से चलती हुई सहभागिनी स्थिति से सम्पूर्ण समाज में प्रभावित होता है। उसके सामाजिक मूल्य से सम्पूर्ण समाज का मूल्यांकन किया जा सकता है।

बुद्ध महिलाओं को सैद्धान्तिक रूप से पुरुषों के समान समझते थे। समाज के अन्दर महिलाओं के अधिकारों की ओर बुद्ध का ध्यान इतना नहीं गया, जितना ध्यान उन्हें मिलना चाहिए था। परन्तु फिर भी जब भी मौके मिले तथागत ने अपने मन की बात कही। उनके द्वारा राजा पसेनजित को कहे गए शब्दों से यह सिद्ध होता है[10] कि जब वह समाचार सुनकर दुखी हुआ कि उसकी पत्नी ने पुत्र की जगह पुत्री को जन्म दिया था; बुद्ध ने उसे कहा कि पुत्री वास्तव में ज्ञानी व गुणी बनकर पुत्र से भी अधिक अच्छी सन्तान सिद्ध हो सकती है। यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि भिक्षुणी संघ की स्थापना से बुद्ध ने महिलाओं को जिस प्रकार धर्म परायणता का अवसर प्रदान किया वह विश्व के इतिहास में आने वाले लम्बे समय तक एक अद्वितीय बात रही। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी मृत्यु के पश्चात् कुछ व्यवहारिक तर्कों को नारी स्वभाव की कमियों के बारे में अटकलबाजी करने के बहाने का आधार बना लिया गया।

संयुक्त निकाय के मातुगाम सुत्त में भगवान् तथागत् ने अपने उपदेशों में कहा है कि नारी एवं पुरुषों में नैसर्गिक अन्तर है। नारी की पांच परेशानियाँ जिन्हें नारी की विशेषता भी कह सकते हैं, का भगवान् बुद्ध ने वर्णन किया है। भगवान् तथागत् कहते हैं, भिक्षुओं स्त्री रजस्वला होती है जबकि पुरुष नहीं होता। स्त्री विवाहित होने पर अपने मां–बाप का घर छोड़ देती है, जबकि पुरुष नहीं छोड़ता। स्त्री गर्भाधान करती है, जबकि पुरुष

नहीं करता। स्त्री बच्चे का प्रजनन करती है, जबकि पुरुष नहीं करता और स्त्री बच्चे को स्तन–पान कराती है, जबकि पुरुष नहीं करता। इसलिए स्त्री के पतिगृह में जाकर अपने को विशेष रूप में संभालना चाहिए। बौद्ध साहित्य में वर्णन आता है । साकेत नगर के करोड़पति सेठ धनंजय की दो कन्यायें विशाखा व सुजाता थी। पिता ने बुद्ध से प्रेरित हो विशाखा के विवाह पर विशाखा को आदर्श गृहिणी बनाने के लिए दस उपदेश दिये–[11]

- बेटी– कभी घर के अंदर की आग बाहर न ले जाना।
- बेटी– बाहर की आग अंदर न लाना।
- बेटी– उसी को देना जो देता है।
- बेटी– जो समय पर नहीं देता उसे न देना।
- बेटी– जो देता है उसको भी देना, जो नहीं देता उसको भी देना।
- खुशी से बैठना।
- खुशी से खाना।
- खुशी से सोना।
- आग की इज्जत करना।
- घर के देवी– देवताओं की इज्जत करना।

'थेरी गाथा' में विशाखा 'थेरी गाथा' नाम से यह कथा है।[12] विशाखा का विवाह श्रावस्ती के नगर के सेठ 'मिगार' के पुत्र पुष्यवर्द्धन से हुआ। इस विवाह में कोसल नरेश प्रसेनजित स्वयं सम्मिलित हुआ था व वर पक्ष की ओर से गया था। उसका ससुर 'मिगार' जैन धर्मावलम्बी था। जब वह ससुर घर गई तो वह बौद्ध संघ को दान देने लगी। बौद्ध धर्म में भक्ति देख कर बहु को धर्म विरोधिनी समझा गया। ससुर चाहता था कि बहु जैनों की भक्ति करे। उधर बहु चाहती थी वे बौद्धों की भक्ति करें। अंत में विशाखा ने अपनी सेवा, सुशीलता, धर्मनिष्ठा, गुणों तथा तर्कों से ससुर की निष्ठा बौद्ध धर्म में स्थापित कर दी, आगे जाकर अपने ससुर की माता कहलायी यानि उसे 'मिगार माता' विशाखा नाम से बौद्ध धर्म में पुकारा जाने लगा। विशाखा ने 29 करोड़ रू. का 'पूर्वा राम' विहार का निर्माण कराया जो 'मिगारमातुपासाद' के नाम से प्रसिद्ध है। यह विहार दो मंजिला 9 महिने में बनकर तैयार हुआ था। इसकी कथा 'धम्मपद अट्ठ कथा' में मिलती है। विशाखा ने बुद्ध होकर निर्वाण पद प्राप्त किया। वह 120 साल जीवित रहीं अंत में पौत्र मृत्यु का दुख भोगा था।[13]

बुद्ध ने विशाखा को नारियों के कर्त्तव्य की स्वयं शिक्षा दी थी। बुद्ध ने कुलवन्ती स्त्रियों के लिए आठ गुणों को ग्रहण करने का विधान बतलाया है, वे आठ सूत्र हैं–[14]

- कुलवधुओं को सास–ससुर की सेवा करनी चाहिए, उनसे सर्वदा मीठे व सहानुभूति पूर्वक वचन बोलने चाहिये; उनके प्रत्येक सुख का ख्याल करना चाहिए।
- अपने पति के मित्र तथा साधु–संतो की उचित सेवा मनोयोगपूर्वक करनी चाहिए।
- घर में रखी कपास के उपयोग की कला में स्त्री को दक्ष होना चाहिए।
- घर के दास–दासियों के जिम्मे लगाये गये काम, उनके भोजन व वस्त्र की व्यवस्था पर पूर्ण निगरानी रखनी चाहिए।
- कृपणता त्याग कर दान देने में मुक्त हस्त होना चाहिए।

इसी सेठ की दूसरी कन्या थी सुजाता। उसने पिता की शिक्षा का पालन नहीं किया और बुद्ध के परम् भक्त अनाथपिंडक की पुत्रवधु बन कर घर का कबाड़ा बना दिया। सुजाता ने घमण्ड के कारण किसी का सम्मान नहीं किया व घर को नरक बना दिया। एक दिन भगवान् बुद्ध अनाथपिंडक के घर गये, वहां पुत्रवधु सुजाता की ऊंची–ऊंची आवाज सुन कर उसे अपने पास बुलाया और भगवान बुद्ध ने सुजाता से कहां कि आदमी की सात प्रकार की भार्यायें होती है। उनमें से तू कौन सी है? कौन सी सात प्रकार की?[15]

- प्राणघातक वघक भार्या
- चोरणी जैसी भार्या
- स्वामी की तरह मालकिन भार्या
- माता जैसी भार्या
- बहन जैसी भार्या
- सखी जैसी भार्या
- दासी जैसी भार्या

इसमें प्रथम तीन प्राणघातक, चोरणी व मालकिन जैसी भार्या, नरकगामी अर्थात् दुःखगामिनी होती है। बाकी चार माता, सखी, बहन, दासी जैसी भार्या संघ जीवन जीने के कारण स्वर्ग अर्थात् सुख की गति को प्राप्त करती है। अंत में सुजाता ने भगवान् से क्षमा मांग कर दासी जैसी भार्या बनने का व्रत लिया। भगवान् बुद्ध कहा करते थे कि पति–पत्नी यदि चाहे तो अपने गृहस्थ जीवन को सुखी बना सकते हैं या दुखी बना सकते हैं। सुखी–दुखी जीवन बनाना किसी ईश्वर या किसी देवता के हाथ में नहीं है। वह मात्र अपने कर्मों के आधार पर हैं। गृहस्थ जीवन में पति–पत्नी के रहने के चार रूप होते हैं। ऐसा मनुष्य भगवान् की दृष्टि में इस प्रकार है, ऐसे गृहस्थ जीवन में–

- एक लाश एक लाश के साथ रहती है
- एक देवता एक देवी के साथ रहता है
- एक लाश एक देवी के साथ रहती है
- एक देवता एक लाश के साथ रहता है।

यहां लाश से मतलब पंचशील (हिंसा, चोरी, झूठ, शराब व्यभिचार से दूर रहना) का पालन न करना। 'देवता' का मतलब 'पंचशील' का पालन करना है। इस प्रकार पति–पत्नी अपनी सूझ–बूझ से अपने गृहस्थ जीवन को एक अनुपम जीवन बना सकते हैं।

बुद्ध व आनन्द द्वारा ऐसे रूख को अपनाया जाना परम्परागत् लिंगिय विकृति से परे सद्गुण व अध्यात्मिक संभावना को पहचानने की ओर से किए गए प्रयासों को प्रतिबिम्बित करता

RRIJM 2015, All Rights Reserved

है। बुद्ध ने नारी को ज्ञानी, मातृत्वशील, सृजनात्मक, भद्र व सहिष्णु के रूप में स्वीकार किया। बुद्ध शिष्याओं में ऐसी महिलाएं थी जो मानसिक व दैहिक दुखों से मुक्त होकर अर्हत् बनी। कुछ भिक्षुणियों की अपनी खुद की शिष्याएं थी जो धर्मप्रतिपादन में सक्षम थी। बुद्ध व दूसरे भिक्षुओं की मध्यस्ता के बिना उन्हें पूर्ण मुक्ति दिला सकती थी। बुद्ध तथा आनन्द जैसे उनके शिष्यों का मानना था कि जाति की तरह लिंग भी किसी व्यक्ति के द्वारा दुःख से छुटकारा पाने के बौद्ध लक्ष्य को प्राप्त करने में बाधा नहीं हो सकता था।

इस प्रकार गौतम बुद्ध और आनन्द जैसे शिष्यों का महिलाओं के प्रति बड़ा ही सकारात्मक व क्रातिकारी रूख था। बुद्ध ने स्त्री व पुरुष दोनों के लिए समान रूप से अपने संघ के दरवाजे खोले। यह एक ऐसा रूख था जो उस समय के लिए एक असाधारण बात थी और जिसे बुद्ध के आलोचकों ने एक उग्र व खतरनाक कदम माना। बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् जहां तक महिलाओं का प्रश्न है एक शून्य उत्पन्न हुआ। बुद्ध जैसे महान् व्यक्तित्त्व के अभाव में आनन्द जैसे महिलाओं के मुट्ठी भर बचे समर्थकों को संघ के उन भीतरी तत्त्वों ने अभिभूत कर दिया, जो महिलाओं के प्रवेश को एक अपमान की बात मानते थे। यह राजगृह में आयोजित पहली बौद्ध संगीति में विशेष रूप से मुखर हुआ जहां संघ में महिलाओं के प्रवेश के लिए आनन्द को उत्तरदायी ठहराकर उसकी कड़ी आलोचना की गई। काल के उसी चक्र में बौद्ध संघ ने ब्राह्मणवाद के महिला विरोधी रूख को गलें लगाया, जिसने लगातार महिलाओं को अपूर्ण, दुष्ट, नीच, विध्वंसक, विश्वघाती, नमकहराम, अविश्वासी, चरित्रहीन, गिरी हुई, कामुक, ईर्ष्यालु, लालची, बेलगाम जैसे विशेषणों से विभूषित किया था।[16] इस रूख से यह विश्वास सशक्त हुआ कि महिलाएं पुरुषों द्वारा कुचली, नियंत्रित व विजित् की जाएं। इस प्रकार के तर्क ने बुद्ध की मृत्यु के कुछ समय बाद भिक्षुणी संघ के अस्तित्त्व को प्रत्यक्षतः जड़ से उखाड़ फेंका और महिलाओं के अस्तित्त्व को हाशियों पर ला खड़ा किया। विग्गसुत्त में स्त्री को पुरुष की सम्पत्ति के रूप में प्रदर्शित किया गया है। यही मत सुल्लवग्ग सुत्त का है। मिलिन्द प्रश्नों में स्वयं महात्मा बुद्ध का कथन है कि एकान्त पाने पर स्त्री को अस्थिर एवं नीच कहा गया है। उदाहरण के लिए महिलाओं के प्रति प्राचीन भारतीय बौद्ध रूख का मूल्यांकन व हमारी अधिकतर व्याख्या संघ व इसके सदस्यों के कार्यकलापों पर आधारित है। बुद्ध या फिर संघ का वृहत् समाज पर व उसकी गतिविधियों पर अत्यन्त कम या फिर नहीं के बराबर नियंत्रण था। लेकिन दूसरी तरफ समाज बौद्ध संघ के फैसलों को कई प्रकार से प्रभावित कर सकता था। क्योंकि संघ विभिन्न प्रकार के समर्थन के लिए समाज पर निर्भर था। बौद्ध धर्म का ब्राह्मणीकरण भारतीय महिलाओं के इतिहास में न केवल एक काला अध्याय था क्योंकि इसके परिणामस्वरूप भिक्षुणी संघ का अस्तित्त्व समाप्त हो गया।

विनय[17] में ऐसे ब्राह्मणों के कई उदाहरण हैं जिन्होंने भिक्षुणियों तक को वैश्याएं कहा था। उदाहरण के लिए–

''अब उस समय कई भिक्षुणियाँ कोशल प्रवेश होते हुए श्रावस्ती जा रही थी, शाम में किसी गांव पहुंचने पर उन्होंने एक ब्राह्मण परिवार में रात बिताने हेतु शरण मांगी। तब उस ब्राह्मणी ने उस भिक्षुणियों से यह कहा–

''आप तब तक प्रतीक्षा कीजिए, जब तक ब्राह्मण आ नहीं जाते।''

तब वह ब्राह्मण रात में आता है और ब्राह्मणी से पूछता है– ''कौन हैं ये?'' स्वामी ये भिक्षुणियाँ हैं।'' यह कहते हुए, ''इन सिर–मुडी रंडियों को बाहर निकालो,'' वह उन्हें घर से बाहर निकाल देता है।[18]

विनय पिटक में यह मानने के पर्याप्त प्रमाण है कि महिलायें मठीय समूह में उपस्थित थी, बल्कि कर्त्ता व शिक्षक के रूप में भी उन्हें प्रमुखता व सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। इस बात को अस्वीकरार नहीं किया जा सकता कि बुद्ध ने भिक्षुणी संघ की स्थापना करके महिलाओं के लिए नए क्षितिजों को खोला। महिलाओं के लिए यह सामाजिक व अध्यात्मिक उन्नति उस समय की दृष्टि से काफी आगे थी।

महिलाओं के पास अपनी पारिवारिक भूमिकाओं के स्थान पर एक विकल्प भी उपलब्ध था कि महिलाएं पुरुष के रूप में पुर्नजन्म लेकर भविष्य में अपने दुखों से छुटकारा पा सकती है। भिक्षुणियों व भिक्षुओं के प्रति लोगों की चुगलखोरी व उन पर दोषारोपण की घटनाएं विनय में भरी पड़ी हैं। किसी भिक्षुणी द्वारा कोई गलती करने पर लोग उन्हें प्रायः सिर–मुंडी वेश्याएं कह कर धिक्कारते रहते थे। इसके विपरीत जब भिक्षुओं से कोई गलती होती थी, तो लोग उनके बारे में इतने अपमानजनक शब्दों को प्रयोग नहीं करते थे। जितना भिक्षुणियों के लिए किया जाता था।

जातक साहित्य बौद्ध कालीन युग की प्रतिछाया है। यह ऐसा दर्पण है जिसमें धर्म, दर्शन, सामाजिक जीवन, राजनैतिक पहलु, आर्थिक व धार्मिक अवस्था पर प्रकाश पड़ता है।[19]

जातकों में स्वयंवर विवाह के अनेक उदाहरण मिलते हैं। स्वयंवर प्रणाली के प्रचलन से स्पष्ट है कि अपने पतियों को चुनने वाली कन्यायें अल्पव्यस्क नहीं हो सकती। जातक साहित्य में गन्धर्व विवाह का वर्णन मिलता है।

तत्कालीन समाज में पत्नी को पति से 3 वर्ष तक अलग रहने के उपरांत तलाक प्राप्त होने का अधिकार था और वह दूसरा विवाह भी कर सकती थी। तत्कालीन गृहस्थ जीवन में कठोर नियम नहीं होते थे। विवाह प्रथा में स्त्री–पुरुष दोनों स्वतंत्र थे। उस काल में व्यामिचार भी खुले रूप से किया जाता था।[20] इस काल के पुरुषों में अत्यन्त सहनशक्ति भी मिलती है। यदि पत्नी को संतान नहीं होती थी तो उसे सामान्य रूप से सर्वसाधारण के लिए सुलभ बनाकर पुत्र रत्न प्राप्त करने का अधिकार था। वह पुत्र राजा बनने का अधिकारी भी होता था। यह प्रथा 'नियोग प्रथा' कहलाती थी।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

कन्या के गृहस्थ जीवन की सफलता–विफलता बहुत कुछ उसके भावी पति की चारित्रिक शारीरिक एंव सामाजिक स्थिति के ऊपर निर्भर रहती है। यही बात कन्या के विषय में भी लागू होती है। वर की भांति वधु के गुणों का भी अत्याधिक ध्यान रखा जाता था। जातक कथाओं[21] में स्त्रियों को संगीत पटु व गीत गाती प्रदर्शित किया गया है। बौद्ध साहित्य में संगीत कला में वीणा, तबला ढोल आदि अनेक वाद्यों का उल्लेख है। इन ललिल कलाओं के अतिरिक्त कन्याओं को अन्य लाभदायक उद्योग–धन्धों जैसे कताई, बुनाई, सिलाई आदि में भी शिक्षा दी जाती थी। आवश्यकता पड़ने पर वे उपयोगी धंधे उनकी जीविकापार्जन में सहायक होते थे। 'धम्मपद' में भी अनेक स्त्रियां अपना कृषि कार्य करती, सूत कातती तथा कपड़ा बुनती प्रदर्शित की गई है।[22]

मेघसाल जातक के अनुसार कौशल राज प्रसेनजित को जब पता चला कि उसकी पत्नी शाक्य पिता द्वारा उत्पन्न दासी पुत्री है तो वह तुरन्त उसका परित्याग करने को उदत्त हो गया। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि विवाह कार्य में जाति का विशेष ध्यान रखा जाता था। परन्तु अनेक स्थानों पर अन्तरजातीय विवाह विक्रय के उदाहरण मिलते हैं।[23]

स्त्री के पुर्नविवाह के अनेक उदाहरण बौद्ध साहित्य में भी उपलब्ध होते हैं। एक जातक में प्रभावती अपने पति के साथ रहने में अनिच्छा प्रकट करती है तथा अन्य पुरुष के साथ विवाह करने का मत प्रकट करती है। दूसरे जातक में वेस्सनतर अपनी पत्नी मद्दी को दूसरा पति ढूंढ लेने की सहमति देता है। एक अन्य जातक में न्यायधीश एक स्त्री को अपने पति का त्याग कर देने की सहमति देता है। अतः वह धार्मिक जीवन के लिए नितान्त बाधक है। जातकों में अनेकानेक कथाएं ऐसी है जिनसे स्त्री के विश्वासघात, काम वासना और छल प्रदर्शित होते हैं।

उत्संग जातक में एक कथा है[24]– एक स्त्री के पति, पुत्र और भाई तीनों को फांसी का दण्ड मिला। राजा ने उसे किसी एक के जीवन दान का वचन दिया उसने भाई के प्राण बचाने का निश्चय किया। कारण बताते हुए उसने कहा कि पति और पुत्र सरलता से मिल सकते हैं किन्तु भाई नहीं मिल सकता।

अर्थात् हे देव, पुत्र मेरी गोद में है, पति मार्ग में दौड़ते हुए मिलते हैं, किन्तु वह देश कहीं नहीं है जहां से सहोदर को प्राप्त कर सकूं। यहां स्त्री की व्यवहार कुशलता व चतुरता प्रकट होती है। इसके साथ–साथ निम्न दो कथाओं की भी विश्वसाहित्य के इतिहास में प्रसिद्ध है।

एक बार एक पुरुष ने अपना रक्त देकर अपनी पत्नी के प्राण बचाए। वह एक नीच लंगड़े से प्रेम के कारण पति को पहाड़ की चोटी से धकेल देती है ताकि वह लंगड़े के साथ रह सके। उस पुरुष की जान एक छिपकली बचा लेती है और वह किसी तरह राजा बन गया। इस अवस्था में वह पत्नी और उसके प्रेमी को दण्ड देता है।[25]

एक राजा किसी सिद्धि के कारण पशु–पक्षियों की बोली समझता है। वह अपनी विद्या किसी को नहीं बताता। यदि बताता तो उसकी मृत्यु हो जाती। एक दिन राजा चीटियों और खटमलों के विनोदपूर्वक वार्तालाप को सुनकर, हंस रहा था। रानी ने हंसने का कारण पूछा राजा से विद्या सीखने का अनुरोध किया। राजा के यह बताने पर कि इससे उसकी मृत्यु हो जायेगी, फिर भी रानी न मानी। राजा रानी को पीटो, तब वह विद्या सीखने का दुराग्रह छोड़ देगी, राजा ने सलाह मान ली और अभीष्ट सिद्ध हो गया। इन कथाओं का सारे विश्व में प्रचार है।

स्त्री समाज का महत्त्वपूर्ण विषय है पर्दा प्रथा। बौद्ध समाज में पर्दा प्रथा का प्रचलन न था। स्त्री का चरित्र ही उसका आवरण है। इस प्रकार का निष्कर्ष बौद्ध साहित्य में ही उपलब्ध होता है। माता के रूप में स्त्री को सम्मान प्रत्येक व्यक्ति ने दिया है। बौद्ध साहित्य में माता का स्थान बहुत ऊंचा है। एक स्थान पर उसे देवता कहा गया है। वृद्धावस्था में माता का निरीक्षण एवं परिपोषण पुत्र का परम् कर्त्तव्य है तथा इसके लिए माता को भी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। बौद्ध साहित्य में भी यह भी कहा गया है स्त्री पुरुष की सखा है।

इस प्रकार बौद्ध साहित्य में बौद्ध काल के दौरान स्त्री समाज में नारी के दो परस्पर विरोधी रूप प्रदर्शित किये गये हैं। एक ओर वह नितान्त दुष्ट प्रकृति की है। वह पाप स्वरूप है। दूसरी ओर बौद्धों ने नारी को नितान्त शुभ वर्णों से अंकित किया है। अतः वह घृणा की पात्र नहीं हो सकती।

थेरीगाथा पालि में 524 गाथाएं हैं। इसमें 73 बौद्ध भिक्षुणियों द्वारा 101 भिक्षुणियों के जीवनानुभव या हृदयोउद्‌गार इस थेरी गाथा में वर्णित है। ये वर्णन संगीतात्मक भाषा, आत्माभिव्यंजक शैली में गीतिकाव्य[26] के रूप में अपने जीवन के अनुभव है। ये सभी भिक्षुणियाँ भगवान् बुद्ध की समकालीन थी व उनकी शिष्याएं थी। नारी जाति के प्रति भगवान् की कितनी अनुकम्पा थी– यह इसी से समझा जा सकता है कि उनमें बहुत सी भिक्षुणियां स्वयं को 'बुद्ध के हृदय से उत्पन्न कन्या'

ओरसा मुखतोजाता[27]
ओरसा धीता बुद्धस्स[28]

कहना अपना गौरव मानती थी। उनकी यही मान्यता थी कि ''जब हमारा चित्त सुसमाहित है तो स्त्री भाव हमारा क्या अहित करेगा''। क्योंकि हम सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर चुकी हैं। हमें धर्म का साक्षात्कार हो गया है। अब इस स्त्रीभाव से हमारी क्या हानि सम्भव है।

''इत्थिमातो नो किं कथिरा चित्तम्हि सुसमाहिते।''[29]

फलस्वरूप उनका भी निर्वाण प्राप्ति में अधिकार था तथा वह निर्वाण उन्होंने प्राप्त भी कियां जिसके साक्ष्यस्वरूप उन्होंने इस ग्रन्थ में उद्धत अपने ये उद्‌गार गाथाबद्ध किये। इस काव्य की विशेषताएं हैं– नैतिक सत्यता, भावनाओं की गम्भीरता तथा

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सबसे बढ़कर एक अपराजित वैयक्तिक ध्वनि। इस काव्य में भिक्षुणिओं के हृदयद्वारों का एक–एक शब्द निर्वाण की परम् शांति से उच्छ्दसित है। इसमें संगीत के साथ जीवन दर्शन भी है।

"अरे! मैं कितनी सुखी हूं।"[30]
अर्थात्
"सीतीभूतम्हि निब्बुता"[31]

अर्थात् निर्वाण को प्राप्त कर मैं परम् शान्त हूं। या निर्वाण से मैंने परम् शान्ति का साक्षात्कार कर लिया। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भिक्षुणियों की ये सभी गाथाएं बुद्ध शासन की भावना से ओत–प्रोत है। इन भिक्षुणियों ने किन कारणों से, किस उद्देश्य से, किस सामाजिक परिस्थिति में रहते हुए प्रव्रजजा ग्रहण की जैसे–

ज्ञान सम्पत्ति कि पूर्णता के कारण[32], पति की विरक्ति के कारण[33], शास्ता में श्रद्धा के कारण[34], अकृतज्ञ, धर्मत् पतियों के कारण[35], अकृतज्ञ पुत्रों के कारण[36], शास्त्रार्थ में पराजित होने के कारण[37]

थेरी गाथा में भिक्षुणियों के वंश, सामाजिक कुलशील आदि के सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि वे प्रायः सभी परिस्थितियों के कारण बुद्ध की शरण में आयी। उनमें से कौशल एवं मगध राजवंशों की महिलाएँ[38], शाक्य व लिच्छवि सामन्ती कुल कि भिक्षुणियाँ[39], ब्राह्मण वंश[40] से आकर बौद्ध धर्म में प्रवज्जित हुई, गृहपति (वैश्य) वर्ग[41] से निकलकर बौद्ध धर्म में प्रवज्जित हुई, कुछ गणिकाएँ[42] संसार में विरक्ति होने पर बौद्ध धर्म की दीक्षा ग्रहण कर भिक्षुणी बन गई। दीन वर्ग से आहत भिक्षुणियाँ[43] लोहार की पुत्री[44] एक बहेलिया की सन्तान थी।

थेरी गाथा में निबद्ध इन भिक्षुणियों के जीवनोद्धारों से 500–600 ई. पूर्व भारतीय समाज में नारी के स्थान पर भी पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। परन्तु इस ग्रंथ का मुख्य आकर्षण उसकी काव्य एवं साधना का धरातल ही है।

थेरी गाथा में प्राकृतिक सौन्दर्य कि प्रकृति भिक्षुणियों में उतनी नहीं मिलती जितनी भिक्षुओं में। थेरी गाथा में केवल जीवन कौमारमृत्य के आम्रवन में रहकर साधना करने वाली शुभा जीवककम्बनिका के जीवनानुभव और वसन्त ऋतु का प्राकृतिक चित्रण का सौन्दर्य दर्शन भुलाये नहीं भुलता। अम्बपालि थेरी का गाथाओं में शरीर की अनित्यता के निरूपण में काव्यमय सौन्दर्य एवं अलंकार लबालब भरा हुआ है।[45] भिक्षुणी अम्बपाली ने अपनी वृद्धावस्था में स्वशरीर का प्रत्यवेक्षण कर जो जो हार्दिक भावना प्रकट की है वह पालि काव्य साहित्य की एक अनमोल निधि है। जब अम्बपाली अपनी जीर्ण–शीर्ण काया देखकर कहती है। महा प्रजापति गौतमी द्वारा भगवान् बुद्ध के प्रति कही गयी श्रद्धाजंलि गाथाओं को हृदयङ्गम करें।[46] जो काव्यगत् विशेषताओं से भरपूर है। जिनका पूर्ण विवेचन ग्रन्थ को पढ़ने से ही ज्ञात हो सकता है। निश्चित रूप से भिक्षुणियों के इन जीवनानुभवों की मार्मिकता और उनकी शान्त, गम्भीर ध्वनि भारतीय साहित्य में अद्वितीय है। थेरी गाथा में भिक्षुणियों ने स्वकार्य जीवन की वास्तविकता और जीवन के करूणापक्ष के अनुभव की विशेष अभिव्यक्ति है।

इस प्रकार थेरी गाथा में भिक्षुणियाँ संसार के भोग–विलासों से दूर रह कर साधना, अध्ययन एवं मनन का जीवन व्यतीत कर रही थी। इन विदुषी भिक्षुणियों में सर्वप्रथम महा प्रजापति का उल्लेख है। इन भिक्षुणियों की साधना एवं विकृता ने बौद्ध व्यवस्था की अपेक्षा उच्चतर बना दिया था। उन्हें मोक्षाधिकार प्राप्त हो चुका था। दीघ निकाय का कथन कि नारी में कोई क्षुदता नहीं है। नारी के उज्जवलांश की ओर संकेत करती है।[47] बौद्ध इतिहास की अमर नारियां खेमा, किंसा गौतमी, धम्मदिन्ना और विसाखा आदि महात्मा बुद्ध के इस विश्वास की सत्यता की साक्षी हैं। उदारहण के लिए– विसाखा संघ की एक धनी महिला थी, भिक्षुणीयों की सेवा, वस्त्र, अन्नदान करती व औषधि आदि का प्रबन्ध करती। कुछ ने तो इसका स्थायी प्रबन्ध कर दिया। इन उपासिकाओं के अतिरिक्त अनेक भिक्षुणियां ऐसी थी जिन्होंने अपनी साधना के द्वारा अर्हत् पद प्राप्त कर लिया था।

बौद्ध सम्प्रदाय में भिक्षुणियों के बड़े–बड़े संघ थे। जिनमें कुछ भिक्षुणियाँ चतुर एवं विदुषी थी। थेरी गाथा में इनकी गति, इनकी मानसिक शांति एवं बौद्धिक विकास का द्योतक है। विहारों में महिलाएं घर से बाह्य की गतिविधियों में सक्रिय हो सकती थी। जैसे– धर्म प्रचार, संगठनात्मक कौशलों का विकास और तो और ऐसा वातावरण जिसमें वे अपनी उपलब्धियों का अनुभव कर सकती थी। दुर्भाग्यवश भिक्षुणी संघ ज्यादा समय तक नहीं रह सका।

ऐसी बात नहीं है कि लिंग भेद विद्यमान नहीं थे। लेकिन वे मुक्ति प्राप्त करने की दृष्टि से नगण्य थे। सारांश यह है कि बुद्ध ने पुरुषों व महिलाओं दोनों के लिए समान रूप से अपने संघ के दरवाजे खोले जिसके कारण बड़ी संख्या में महिलाओं ने इस अवसर का लाभ उठाया। बुद्ध व आनंद द्वारा ऐसे रूख को अपनाया जाना परम्परागत् लिंगिय विकृति से परे सद्गुण व आध्यात्मिक संभावना को पहचानने की ओर से किए गए प्रयासों को प्रतिबिम्बित करता है। बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् जहां तक महिलाओं का प्रश्न है एक शून्य उत्पन्न हुआ। बुद्ध जैसे महान् व्यक्तित्त्व के प्रभाव में आनन्द जैसे महिलाओं के मुट्ठी भर समर्थकों को संघ के उन भीतरी तत्त्वों ने अभिभूत कर दिया जो महिलाओं के संघ में प्रवेश को एक अपमान की बात मानते थे। यह राजगृह में आयोजित पहली बौद्ध संगीति में विशेष रूप से मुखर हुआ। जहां संघ में महिलाओं के प्रवेश के लिए आनन्द को उत्तरदायी कर उसकी कड़ी आलोचना की गई।

बुद्ध या फिर संघ का वृहत् समाज पर बराबर नियंत्रण था। लेकिन दूसरी तरफ समाज बौद्ध संघ के फैसलों को कई प्रकार से प्रभावित कर सकता था। क्योंकि संघ विभिन्न प्रकार के समर्थन के लिए समाज पर निर्भर था। बुद्ध तथा आनन्द जैसे उनके कुछ सहयोगियों का यह स्पष्ट मानना था कि जाति की तरह लिंग भी किसी व्यक्ति द्वारा दुःख से छुटकारा पाने के बौद्ध लक्ष्य को प्राप्त करने में बाधा नहीं हो सकता। हार्नर[48] ने लिखा

है कि बुद्ध ने उनमें पुरुषों की तरह अच्छाई व अध्यात्मिकता की अन्तः शक्ति को देखा। अल्तेकर[49] के अनुसार भिक्षुणी संघ की स्थापना का शायद नकारात्मक परिणाम भी रहा होगा। आधुनिक थेरवादी देशों में भिक्षुणी संघ का प्रायः न होना भी महिलाओं के खिलाफ दक्षिण एशियाई देशों के समाज में इस स्वाभाविक पक्षपात को प्रभावित करता है।

बौद्ध धर्म का ब्राह्मणीकरण भारतीय महिलाओं के इतिहास में न केवल एक काला अध्याय था। क्योंकि उसके परिणामस्वरूप भिक्षुणी संघ का अस्तित्त्व समाप्त हो गया। रीटा ग्रास[50] ने संकेत किया है कि बुद्ध द्वारा बनाये नियमों द्वारा महिलाओं की अकेली यात्रा व काम करने पर सामान्यतः प्रतिबंध लगाया गया था। इस प्रकार के व्यवहार ने महिलाओं को दुःख भरी अवस्था तक गिरा दिया और उनका जीवन सही में हाशिये पर आ गया। ऐसा प्रतीत होता है कि महापरिनिर्वाणोंत्तर काल में बौद्ध संघ में सामान्यतः वही महिलाएं प्रवेश कर पाती थी जो या तो सम्राट अशोक की पुत्री संघ मित्रा कि भांति समाज की नैतिकता के आम नियमों से ऊपर थी या फिर वे औरतें जिनके आगे पीछे कोई नहीं था। जो समाज की नैतिकता कि सीमा से बाहर निकल चुकी थी। लेकिन दशा या परिस्थितियां जैसी भी रही हो महिलाओं को एक अच्छा अवसर मिला। बौद्ध धर्म ने महिलाओं को मुक्ति पाने तथा खुद को संयोजित करने का मौका दिया। इस प्रकार के वातावरण में थेरी गाथा जैसे– एक अद्वितीय ग्रंथ की रचना कि गई। जिसका नाम हर बार तब लेना चाहिए जब भी बौद्ध धर्म में महिलाओं की बात की जाए। इससे आंकड़े संतुलित हो जायेंगे।

अतः बौद्ध धर्म में महिलाओं को मुक्ति पाने तथा खुद को संयोजित करने का मौका दिया। उसे भिक्षुणी रूप देकर अशांत विश्व की मानवता को शांति का पाठ पढाने के लिए उद्धृत किया और संघ में प्रवेश दिलाकर मुक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। यह वास्तव में महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक अनुठा प्रयास था।

---

[1] For the proper understanding of humanity, there is the need of a model which would strictly avoid placing one gender in th centre and the other on the fringes.
[2] Gender roles and stereotypes in every society have shown Men and Women as more distinct and divergent from each other then is biologically dictacted.
[3] Such a model also acknowledge that expression of human creativity, whether it is artistic, social and intellectual, is both created and experienced by gendered sexual beings.
[4] 'kick away gold, women and fame, three universal fetters of man'.
[5] Kajyama yuichi, op. cit. 159-60.
[6] देखें भिक्षुणी विनय व चुल्लवग्ग
[7] Problem with Bhikkhunis in the Pali Vinaya.
[8] लाभेय्य मातुगामों तथा गाप्तप्पवेदित धम्म विनये अगारस्मा अनगरियं पब्बजं–चुल्लवग्ग, 373 (बुद्धाजयन्ती त्रिपिटक ग्रंथ माला) (BJE) Colombo : Janarajaya; 3977) महापरिनिर्वाण सुत्त, चुल्लवग्ग।
[9] देखें जातक काथाएं।
[10] देखें सुत्त पिटक।
[11] संयुक्त निकाय– मातुगाम सुत्त।
[12] देखें थेरी गाथा।
[13] देखें धम्मपद अट्ठकथा।
[14] अंगुत्तर निकाय, 4, 267
[15] वही
[16] देखें विनय पिटक (SBB. XII. 275) 1. GS.1.93; KS. 1.146; J. I.11; 285, II.474,478,527,IV,124-125
[17] विनय पिटक में बौद्ध संघ में भिक्षु व भिक्षुणियों की दैनिक चर्चा का भी वर्णन मिलता है। विनय पिटक में 227 नियमों को विभक्त कर तीन ग्रंथों (सुत्त विभंग, खन्धक, परिवार) में समाहित कर दिया गया है।
[18] यह वर्णन Scared Book of Buddhist (X11.275) में भी मिलता है।
[19] देखें जातक कथाएं।
[20] 'उत्संग जातक' इसका उदाहरण है।
[21] देखें जातक कथाएं।
[22] धम्मपद।
[23] मेघसाल जातक।
[24] ''उच्छंग देव, में पुत्रो पथे धावन्तिया पति।
तञ्च देसं न पस्सवामि चतो सेदरियमानयेति।।'' (जातक कथा पृ. 77)
[25] चुल्ल–पदुम जातक (J.I. 115-121)
[26] उस समय के लोक गीत
[27] थेरी गाथा 337
[28] थेरी गााथा 46
[29] थेरी गाथा 61
[30] थेरी गाथा 24
[31] थेरी गाथा 66, 77, 101

[32] वही, मुक्ता 233, पूर्णा 233
[33] वही, धम्मदिना 236
[34] वही, धम्मा 237, सुजाता 261, अम्बपाली 66 आदि।
[35] वही, भद्रा, कुण्डलकेशा, 254, ऋषिदासी 303।
[36] वही, शोणा 254।
[37] वही, विमल 249।
[38] वही, खेमा 261, सुमना 237, शैला 246, सुमेधा 308।
[39] वही, महा प्रजापति गौतमी 263, नन्दा, सुन्दरी नन्दा आदि।
[40] वही, भद्रा कापिलायनी 247, रोहणी 283।
[41] वही, धम्मदिन्ना 236, भद्रा कुण्डला केशा 254, पटाचारा 255, सुजाता 261।
[42] वही, अभयमाता 241, अड्ढकासि 239, अम्बपाली 280 आदि।
[43] वही, शुभा 287, चापा 286।
[44] परमत्थदीपनी, पृष्ठ 297,
[45] वही पृष्ठ 280
[46] वही पृष्ठ 163–64।
[47] दीघ निकाय,
[48] I.B. Horner, Women in early Buddhist Literatura
[49] A.S. Altekar, The postion of Women in Hindu Civilization
[50] Rita M. Gross, Buddhism after patriarchy, OP, Cit. 118

संदर्भ ग्रंथ सूची

प्राथमिक स्रोत

1. विनय पिटक : Moti Lal Banarsidass, T.W. Rhys Davids & H. Oldenberg, Delhi 1982-85. The Corporate Body of the Buddha, Education Foundation, Taipei : Taiwan अनु. राहुल सांस्कृत्यायन. ताईपे ताइबान; बिहार राजकीयेन, पालि प्रकाशन मण्डलेन, भिक्षु जगदीश काश्यप, 1958। विनयपिटक, अनु. राहुल सांकृत्यायन, दि. कौरपोरेटेड बॉडी दि बुद्ध एजुकेशन फाउन्डेशन A Vinaya Pitika Pali : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute
2. विनय पिटक अट्ठकथा : समन्त पासादिका Ed. J. Takakusu & M. Nagai, the Samantapasadika, Buddhaghosa's Commmentary on the Vinaya Pitaka, 8 Vols (including index by H. Kopp) London, PTS, 1947-75.
3. चुल्लवग्ग : चुल्लवग्ग पालि Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute बुद्धाजयन्ती त्रिपिटक ग्रंथ माला (BJE) Colombo : Janarajaya; 3977),
4. भिक्खुणी पातिमोक्ख : भिक्खुणी पातिमोक्ख पालि : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute सं. व अनु. भिक्षु धर्मरक्षित, दिल्ली सम्यक् प्रकाशन, 2010।
5. सुत्तपिटक : सुत्तपिटक पालि : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute.
6. दीघ निकाय : दीघ निकाय पालि : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute, सं. व अनु. बौद्ध भारतीय प्रकाशन, शास्त्रीय द्वारकादास वाराणसी, 2005
7. दीघ निकाय की अट्ठकथा : सुमंगलविलासिनी Eds. T.W. Rhys Davids, J.E. Carpentier & W. Stede. Sumangalavilasini, Buddhghosa's Commentary on the Digha Nikaya, 3 Vols, London : PTS, 1886-1932.
8. संयुक्त निकाय : संयुक्त निकाय पालि Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute. नव नालन्दा महाविहार, भिक्षु जगदीश काश्यप, नालन्दा, 1959। बौद्ध भारतीय प्रकाशन, स्वामी द्वारका दास शास्त्री, वाराणसी। Tr. C.A.F. Rhys Davids and S.S. Thera, Vol. I; C.A.F. Rhys Davids & F.L. Woodward Vol. II; F.L. Woodward Vols. III, IV, V. The Book of the Kindred Sayings; London PTS, 1950-56
9. संयुक्त निकाय की अट्ठकथा : सारत्थप्रकाशिनी Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute. Ed. F.L. Woodward, the Saratthappakasini, Buddhaghosa's Commentary on the Sanyutta Nikaya, 3 Vols, London : PTS, 1977.
10. अंगुत्तर निकाय : अंगुत्तर निकाय पालि Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute, सं. व अनु. नव नालन्दा प्रकाशन, भिक्खु काश्यप जगदीश, नालन्दा 1958।
11. अंगुत्तर निकाय की अट्ठकथा : मनोरथपूरणी Eds. H. Walleser & H. Kopp, the Manorathapurani, Buddhaghosa's Commentary on the Anguttara Nikaya, 5 Vols, London : PTS, 1956-1973
12. थेरीगाथा थेरीगाथा पालि : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute सं. आर. दिशेल, पालि टैक्स सोसायटी लंदन, 1883, नालंदा देवनागरी संस्करण 1959। विमल कीर्ति, सम्यक प्रकाशन, दिल्ली। थेरीगाथा पालि, (सं. व अनु.) स्वामि द्वारका दास शास्त्री, वाराणसी, बौद्ध भारतीय 2003। वही, गाथा 337A Ed. K.R. Norman & L. Alsdorf; London, PTS, 1966. Tr. With an intro & notes K.R. Norman; Elders' Verses II, London : PTS, 1969. Tr. C.A.F. Rhys Davids & K.R. Norman, Poems of carly Buddhist Nuns, London; PTS, 1989.
13. थेरीगाथा की अट्ठकथा Eds. F.L. Woodward, E. Hardy, E. Muller, D.L. Barua etal, Paramatthadipani. London P TS,

परमत्थदीपनी	1891-1977; Tr. W. Pruitt, the Commentary on the Verses of the Theris, Oxford : PTS 1998.
14. धम्मपद :	धम्मपद पालि : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute. मोतीलाल बनारसी दास, अनु. डॉ. भिक्षु धर्मरक्षित, वाराणसी, 1977। 'धम्मपद गाथा और कथा', सम्यक् प्रकाशन, तारा राम, नई दिल्ली, 2006। Buddhist Missionary Society, Ed & tr. Narada Thera, Kuala Lumpur : 1978
15. धम्मपद अट्ठकथा :	नथमलटाटिया, नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा विहार, 1973। Ed. H. Smith, H.C. Norman, L.S. Tailang Dhammapada Atthakatha, 4 Vols, London : PTS 1906-15; Tr; E.W. Burlingame, Buddhist Legends, 3 Vols, Harvard Oriental Series, Cambridge, Mass : Harvard University Press, 1921, repr. London PTS, 1979
16. जातक :	जातक पालि : Dhamma Giri, Igatpuri, near Mumbai, India, the Vipassana Research Institute] कौसल्यापन भदन्त आनन्द, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग 1995। 1995A Ed. V. Fausboll, 7 Vols. (7 Vol. Index by D. Anderson), Trubner & Co, London, 1877. The Jataka or the Stories of the Buddha's former Births, Cambridge University Press, Cambridge, 1895-1907

द्वितीयक स्रोत

1. Altekar, A.S. :	The postion of Women in Hindu Civilization, 3rd edition, Delhi; Moti Lal Banarsidas, 1974
2. Gross Rita M. :	Buddhism after Patriarchy : A Feminine History, Analysis and Reconstruction of Buddhism, Albany : state University of New Yark Press, 1992 : 36, 208, 118
3. Horner J.B. :	1. Women in Early Primitive Buddhism, Delhi, Moti Lal Banarsidas, 1975, Originally Publised in London, 1930. 2. Women in Early Buddhist Literature, Kandy : Buddhist Publication Society, 1982.
4. Kaite Black Stone :	"Damming the Dhamma : Problem with Bhikkhunis in the Pali Vinaya," a Paper presented at the 12th Conference of th International Associtation of Buddhist studes, Lausanne, Switzerland, August, 1999.
5. Muller Max F. :	Sacred Book of the East, Translated by Various Oriental Scholars and edt. by. : Sacred Book of Buddhist Vol. XXXV, Oxford at the Clarendon Press 1890.
6. Yuichi Kaiyama :	"Women in Buddhism," Eastern Buddhist, NS, 15, 1982; 53-70.
7. आचार्य नरेन्द्र देव :	बौद्ध धर्म दर्शन, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्, सम्मेलन भवन पटना, 1956।